Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

हिन्दी साहित्य

प्रश्नपत्र-2 (खंड-ख)

गद्य साहित्य (भाग-2)

'नाटक और निबंध'

- भारत दुर्दशा
- स्कंदगुप्त
- आषाढ़ का एक दिन
- चिंतामणि
- निबंध-निलय

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CSHL08

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

हिन्दी साहित्य

प्रश्नपत्र–2 (खण्ड–ख)

गद्य साहित्य (भाग–2)

'नाटक और निबंध'

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष: 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web: www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPSC DLP

विषय सूची (Contents)

7.	**भारत दुर्दशा**	**7–21**
7.1	भारत दुर्दशा की संवेदना	7
7.2	भारत दुर्दशा में भारतेंदु का इतिहास-बोध	9
7.3	क्या भारत दुर्दशा त्रासदी है	10
7.4	भारत दुर्दशा का नाट्य रूप	11
7.5	भारत दुर्दशा की भाषा	12
7.6	भारत दुर्दशा की अभिनेयता/रंगमंचीयता	14
7.7	व्याख्या अभ्यास : भारत दुर्दशा	15
7.8	भारत-दुर्दशा (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण अंश तथा उनके प्रसंग)	16
8.	**स्कंदगुप्त**	**21–55**
8.1	स्कंदगुप्त नाटक की मूल कथा	21
8.2	स्कंदगुप्त नाटक में राष्ट्रीय चेतना	22
8.3	स्कंदगुप्त में रस योजना	25
8.4	'स्कंदगुप्त' न सुखांत है, न दुखांत, यह प्रसादान्त नाटक है	27
8.5	'स्कंदगुप्त' की दार्शनिक चेतना	27
8.6	स्कंदगुप्त नाटक का नामकरण	29
8.7	स्कंदगुप्त में इतिहास एवं कल्पना	30
8.8	स्कंदगुप्त नाटक की भाषा	32
8.9	स्कंदगुप्त की चरित्र योजना	34
8.10	स्कंदगुप्त के 'नायक' का चरित्र	35
8.11	देवसेना का चरित्र	37
8.12	प्रसाद के नारी चरित्र	38
8.13	स्कंदगुप्त की अभिनेयता	39
8.14	भारत दुर्दशा व स्कंदगुप्त की अभिनेयता की तुलना	41

8.15 स्कंदगुप्त में भारतीय तथा पाश्चात्य सिद्धान्तों का समन्वय 42
8.16 स्कंदगुप्त पर पारसी रंगमंच परंपरा के प्रभाव 43
8.17 व्याख्या अभ्यास–1: स्कंदगुप्त 43
8.18 व्याख्या अभ्यास–2: स्कंदगुप्त 45
8.19 स्कंदगुप्त (व्याख्यास हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश व उनके प्रसंग) 47
8.20 व्याख्या हेतु अन्य महत्त्वपूर्ण गद्यांश 51

9. आषाढ़ का एक दिन **56–83**
9.1 नाटक की संवेदना एवं उद्देश्य 56
9.2 अस्तित्ववाद: एक परिचय 59
9.3 आषाढ़ का एक दिन पर अस्तित्ववाद का प्रभाव 60
9.4 'आषाढ़ का एक दिन' शीर्षक की सार्थकता 62
9.5 इतिहास तथा कल्पना का समन्वय 63
9.6 'आषाढ़ का एक दिन' की प्रासंगिकता 64
9.7 शिल्प–पक्ष 66
9.8 आषाढ़ का एक दिन की रंगमंचीयता 72
9.9 व्याख्या अभ्यास: आषाढ़ का एक दिन 74
9.10 आषाढ़ का एक दिन (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश) 75

10. चिंतामणि **84–103**
10.1 'कविता क्या है' निबंध की संवेदना 84
10.2 'श्रद्धा–भक्ति' निबंध की संवेदना 86
10.3 शुक्ल जी की निबंध–शैली/शिल्प 88
10.4 आचार्य शुक्ल के मनोविकारपरक निबंध: मनोवैज्ञानिक या साहित्यिक 91
10.5 आचार्य शुक्ल के निबंध: वस्तुनिष्ठ या व्यक्तिनिष्ठ 92
10.6 हिन्दी निबंध परम्परा में आचार्य शुक्ल का स्थान 93
10.7 शुक्ल जी के निबंध संबंधी विचार 95
10.8 शुक्ल जी 'श्रुति मार्ग' के नहीं, 'मुनि मार्ग' के अनुयायी हैं 96
10.9 चिन्तामणि के निबंधों के आधार पर शुक्ल जी की चिंतन पद्धति 97
10.10 व्याख्या प्रारूप (कविता क्या है) 97
10.11 व्याख्या प्रारूप : 'श्रद्धा–भक्ति' 99

10.12 श्रद्धा-भक्ति (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश) 100

10.13 कविता क्या है? (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश) 101

11. निबंध-निलय **104–128**

11.1 बालकृष्ण भट्ट कृत "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है" 104

11.2 प्रेमचंद कृत "साहित्य का उद्देश्य (प्रगतिशीलता)" 106

11.3 कुबेरनाथ राय कृत "उत्तराफाल्गुनी के आसपास" 108

11.4 गुलाब राय कृत "भारतीय संस्कृति" 111

11.5 आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी कृत "कुटज" 113

11.6 डॉ. रामविलास शर्मा कृत "तुलसी-साहित्य के सामंत विरोधी मूल्य" 117

11.7 अज्ञेय कृत "संवत्सर" 120

11.8 निबंध-निलय (व्याख्या हेतु महत्त्वपूर्ण गद्यांश) 123

अध्याय
7

भारत दुर्दशा

7.1 भारत दुर्दशा की संवेदना

भारत दुर्दशा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा 1875 ई. में रचित एक लघु नाटक है जिसमें उनकी नवजागरण चेतना और राष्ट्रीय बोध विस्तृत रूप से अभिव्यक्त हुआ है। इस प्रतीकात्मक नाटक में भारतेन्दु ने भारत की दुर्दशा के सभी पक्षों को कुछ काल्पनिक प्रतीकों के माध्यम से स्पष्ट किया है।

भारत की दुर्दशा तथा उसके कारण

भारत दुर्दशा में भारतेन्दु ने बताया है कि वर्तमान भारत किस प्रकार विनाश के मार्ग पर बढ़ रहा है। इसकी आर्थिक, राजनीतिक और सामजिक संरचनाएँ पूर्णत: खंडित हो गयी हैं और सबसे अधिक चिन्ता की बात यह है कि भारत के निवासी इस दुर्दशा को दूर करने के लिये प्रतिबद्ध भी नहीं दिखते। इस समस्या की सर्वांगीण समीक्षा करते हुए उन्होंने चुन-चुनकर उन कारणों की खोज की है जिन्हें दूर करना भारत के उज्ज्वल भविष्य के लिये ज़रूरी हो गया है।

भारतेन्दु के अनुसार हमारी इस दुखद स्थिति के लिये बाह्य और आंतरिक-दोनों कारण जिम्मेदार हैं। उन्होंने भारत दुर्दैव की कल्पना में संकेत किया है कि वह अंग्रेज़ी सभ्यता का प्रतीक है जिससे स्पष्ट होता है कि अंग्रेज़ी राज और उसकी शोषणकारी नीतियाँ हमारी इस दशा के कारणों में शामिल हैं। किन्तु, भारतेन्दु उन लोगों में से नहीं हैं जो अपनी समस्याओं का ठीकरा दूसरों पर फोड़कर शांत हो जाते हैं। उनका ईमानदार आत्म-मूल्यांकन इस तथ्य का साक्षी है कि हमारी दुर्दशा के ज्यादा बड़े कारण हमारे भीतर ही निहित हैं। ऐसे मुख्य कारण हैं- धर्म, संतोष, आलस्य, मदिरा, अज्ञान तथा रोग इत्यादि।

धर्म ने हमें ऐसा दर्शन दिया जिससे सब लोग स्वयं को ब्रह्म समझने लगे और स्नेहशून्य हो गए। इतना ही नहीं, शैव-शाक्त आदि मतों ने सांप्रदायिकता पैदा की। जातीय संरचना ने जातिवाद को पैदा किया और बाल-विवाह तथा विधवा विवाह निषेध जैसी स्थितियों ने सामाजिक गतिशीलता को भंग कर दिया। धार्मिक अंधविश्वासों ने परदेस यात्रा से रोककर हमें कूप-मण डूक बना दिया है- दिये

"शैव शाक्त वैष्णव, अनेक मत प्रगटि चलाए
जाति अनेकन करि नीच अरु ऊँच बनायो।"

धर्म का कर्मकाण्डीय रूप हमारी दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण है किन्तु संतोष और आलस्य भी कमतर नहीं हैं। संतोष व्यक्ति को निष्क्रिय और प्रयत्नहीन बना देता है। भारतेन्दु ने तुलसीदास ('कोऊ नृप होउ हमें का हानी') व मलूकदास ('अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम') के कथनों का ज़िक्र तो किया ही है, एक व्यंग्यात्मक ग़ज़ल भी इस संबंध में रची है-

"दुनिया में हाथ-पैर हिलाना नहीं अच्छा
मर जाना पै उठके कहीं जाना नहीं अच्छा।"

इसके अतिरिक्त मदिरा और अंधकार ने भी भारत का पर्याप्त नुकसान किया है। उच्च से लेकर निम्न वर्ग तक सभी में मदिरा की महिमा है और इस कारण देश की बहुत सारी आर्थिक और मनोवैज्ञानिक क्षमता नष्ट हो जाती है। भारतेन्दु ने व्यंग्य करते हुए बताया है कि वर्तमान समय में कोई चाहे धर्माधीश हो; बुद्धिजीवी हो; वकील हो या ईश्वर ही क्यों न हो, सभी मदिरा के भक्त हैं। वे व्यंग्यपूर्वक कहते हैं-

"मदवा पीले पागल, जीवन बीत्यौ जात,
बिनु मद जगत सार कछु नाहिं, मान हमारी बात।"

इन मुख्य कारणों के साथ भारतेन्दु ने कुछ गौण कारणों का भी उल्लेख किया है जो भारत की दुर्दशा के लिये ज़िम्मेदार हैं। अपव्यय, अदालत, फैशन, सिफारिश को धन-निर्गम के साथ अर्थव्यवस्था को नष्ट करने वाले कारण बताया गया है तो

विद्या की चरचा फैल चली, सबको सब कुछ कहने-सुनने का अधिकार मिला, देश-विदेश से नई-नई विद्या और कारीगरी आई। तुमको उस पर भी वही सीधी बातें, भाँग के गोले, ग्रामगीत, वही बाल्यविवाह, भूत-प्रेत की पूजा, जन्मपत्री की विधि! वही थोड़े में संतोष, गप हाँकने में प्रीति और सत्यानाशी चालें! हाय अब भी भारत की यह दुर्दशा!

प्रसंग– वही

हे भारत! कम-से कम अपने अस्तित्व को तो पहचानो। पहचानो तो सही, तुम क्या थे, और अब क्या हो गए हो। देखो पश्चिम की ओर आधुनिक ज्ञान और विज्ञान रूपी सूर्य ने अपना प्रकाश बिखेरना शुरु कर दिया है। अगर तुम अंग्रेज़ों का राज्य पाकर भी नहीं जागे और अब भी तुमने अपने आपको नहीं संभाला तो यह बुरा होगा। अब तो भारत-भारतेश्वरी ने भारतीय प्रजा को पहचान लिया है। अब चारों ओर विद्या का प्रकाश विकीर्ण हो रहा है। आज भारत में देश-विदेश से नई दस्तकारी और नई कलाएँ आ रही हैं। तुम तो आज भी सीधी-साधी बातों में उलझे हो। बस, भांग चढ़ाते हो और लम्बी तान के सोते रहते हो। बहुत हुआ तो ग्रामीण लोकगीतों मे नाच-कूदकर वक्त बर्बाद कर लिया। आज तुम्हें बाल-विवाह पसंद है। आज भी तेरा भूत-प्रेत की पूजा में मन लग रहा है। वह जन्म-पत्री, टोने-टोटकों मे अपनी बीमारी का इलाज ढूँढ रहा है। जो थोड़ा-बहुत मिल जाए, उसी में संतुष्ट है । चाल-चौपालों में गप हाँकने के सिवाय तुम्हें कोई काम नहीं। वहीं वहीं बैठा हुआ उल्टी-सीधी चाल चलता रहता है। हाय! भारत तुम कितनी दुर्दशा में जी रहे हो।

अभ्यास हेतु प्रश्न

1. निम्नलिखित गद्यांशों की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिये और उसका भाव-सौंदर्य प्रतिपादित कीजिये। **(प्रत्येक लगभग 150 शब्दों में)**

   (a) हा! भारतवर्ष को ऐसी मोहनिद्रा ने घेरा है कि अब उसके उठने की आशा नहीं। सच है, जो जानबूझकर सोता है उसे कौन जगा सकेगा? हा दैव! तेरे विचित्र चरित्र है, जो कल राज करता था वह आज जूते में टांका उधार लगवाता है। कल जो हाथी पर सवार फिरते थे, आज नंगे पाँव वन-वन की धूल उड़ाते फिरते हैं। **U.P.S.C. (Mains) 2017**

   (b) हाय! भारत को आज क्या हो गया है? क्या निस्संदेह परमेश्वर इससे ऐसा ही रूठा है? हाय, क्या अब भारत के फिर वे दिन न आवेंगे? हाय, यह वही भारत है, जो किसी समय सारी पृथ्वी का शिरोमणि गिना जाता था। **U.P.S.C. (Mains) 2016**

2. 'भारत-दुर्दशा' प्रायः कथाविहीन, घटनाविहीन नाट्य रचना है। फिर भी इसके मंचन की संभावनाएँ कम नहीं है। अभिनेयता की दृष्टि से विवेचन कीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2017**
3. 'भारत-दुर्दशा' का इच्छित आदर्श क्या है? समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत कीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2016**
4. "भारतेन्दु के कुछ नाटकों में गदर की साहित्यिक प्रतिक्रिया प्रकट हुई है।" 'भारत दुर्दशा' के विशेष संदर्भ में तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2015**
5. 'भारत दुर्दशा' मे तत्कालीन समाज को जो प्रतिबिंबन हुआ है, वह आज कहाँ तक प्रसंगिक है? युक्तियुक्त विवेचना कीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2011**
6. 'भारत दुर्दशा' का हिंदी नव-जागरण से क्या संबंध है? तर्कपूर्ण उत्तर दीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2009**
7. 'भारत दुर्दशा' में व्यक्त भारतीय नवजागरण की चिंता का स्वरूप स्पष्ट कीजिये।- **U.P.S.C. (Mains) 2008**
8. 'भारत दुर्दशा' में प्रतिबम्बित तत्कालीन भारत की परिस्थितियों और उन्हें लेकर लेखक की चिंताओं का विवेचन कीजिये। **U.P.S.C. (Mains) 2004**

अध्याय
8

स्कंदगुप्त

8.1 स्कंदगुप्त नाटक की मूल कथा

स्कंदगुप्त नाटक 1928 ई० में महान नाटककार जयशंकर प्रसाद द्वारा रचा गया। यह नाटक प्राचीनकालीन भारतीय इतिहास के गुप्तवंशीय शासक स्कंदगुप्त के चरित्र को केन्द्र में रखकर रचा गया है। इसमें रचनाकार का उद्देश्य न तो इतिहास की पुनर्रचना करना है और न ही उनमें इतिहास के प्रति नोस्टाल्जिया का भाव था, बल्कि वे इस रचना के माध्यम से अपने समय की राष्ट्रीय, सामाजिक-सांस्कृतिक समस्या का समाधान प्रस्तुत करना चाह रहे थे। अत: स्कंदगुप्त नाटक को इसी आलोक में पढ़ने-समझने का प्रयास करना चाहिये।

'स्कंदगुप्त' इस नाटक की कथा का नायक है। रचना का आरम्भ उज्जयिनी में स्थित एक युद्ध शिविर में चल रहे वार्तालाप से होता है। वस्तुत: उस समय आर्यावर्त पर एक ओर बाह्य संकट के रूप में पुष्यमित्र-हूणों के आक्रमण हो रहे थे तो दूसरी ओर सत्तासीन गुप्त सम्राट कुमारगुप्त के उत्तराधिकारी पद के लिये षड्यंत्र रचे जा रहे थे, जबकि साम्राज्य की ओर से पहले ही स्कंदगुप्त को युवराज घोषित किया जा चुका था। किन्तु, स्कंदगुप्त कहता है कि उसे शासक बनने में कोई रुचि नहीं है, वह मात्र एक सैनिक के रूप में ही साम्राज्य की सेवा करना चाहता है। इसी विषय पर पर्णदत्त और चक्रपालित स्कंदगुप्त को समझाते हैं कि साम्राज्य की सुरक्षा एवं प्रतिष्ठा के लिये उसका शासक बनना आवश्यक है। दूसरी ओर स्कंदगुप्त की विमाता अनन्तदेवी अपने पुत्र पुरगुप्त को शासक बनाने के लिये भटार्क और प्रपंचबुद्धि के साथ षड्यंत्र रच रही है। इसी क्रम में जब कुमारगुप्त की मृत्यु हो जाती है तो पुरगुप्त और भटार्क को उनके कुकृत्यों से रोकने में स्वयं को अक्षम पाकर उनके वफादार महाप्रतिहार कुमारामात्य एवं महादंडनायक आत्महत्या कर लेते हैं।

दूसरी ओर, मालव राज्य की सुरक्षा का गुप्त साम्राज्य द्वारा दिये गए वचन को निभाने के लिये स्कंदगुप्त मालव की ओर प्रस्थान करता है, जहाँ मालवराज बंधुवर्मा अपने भाई भीमवर्मा तथा अन्य सैनिकों के साथ दुर्ग की रक्षा का प्रयास कर रहा है और अन्त:पुर में महारानी जयमाला अपनी ननद देवसेना के साथ मोर्चा संभाले हुई हैं। उन्हीं के साथ श्रेष्ठी कन्या विजया ने भी प्राण रक्षा के लिये अन्त:पुर में शरण ली हुई है। जैसे ही मालवों पर शत्रु की विजय होने लगती है, ठीक उसी समय स्कंदगुप्त आकर पुष्यमित्रों को पराजित कर देता है जिससे अहसानमंद होकर बंधुवर्मा अपना राज्य स्कंदगुप्त को समर्पित कर देता है। इसके पूर्व विजया एवं देवसेना दोनों स्कंदगुप्त के प्रति अनुराग रखने लगी थीं। लेकिन जब बंधुवर्मा ने स्कंदगुप्त को अपना राज्य समर्पित कर दिया तो विजया को ऐसा लगा कि देवसेना से स्कंदगुप्त का विवाह कराने के लिये बंधुवर्मा ने यह कार्य किया है। इसलिये वह देवसेना के प्रति ईर्ष्या भाव रखने लगी, यहाँ तक कि उसने एक बार प्रपंचबुद्धि से मिलकर उसकी बलि दे देने तक का षड्यंत्र रचा जो अन्तत: विफल रहा। किन्तु देवसेना से बदला लेने के लिये विजया पुन: स्कंदगुप्त के शत्रुओं अनन्तदेवी, भटार्क एवं पुरगुप्त से मिल गई और भटार्क के प्रति विशेष अनुराग दिखाने लगी। किन्तु, एक अवसर पर जब उसने पुन: स्कंदगुप्त को पाने का प्रयास किया और यह भेद भटार्क के सामने खुल गया, तो उसे अन्तत: आत्महत्या करनी पड़ी।

एक ओर जब स्कंदगुप्त मालव के प्रश्नों में उलझा हुआ था तो दूसरी ओर षड्यंत्रकारियों ने स्कंदगुप्त की माता देवकी की हत्या का भी षड्यंत्र रचा। किन्तु यहाँ भी आकस्मिक रूप से स्कंदगुप्त का प्रवेश होता है और वह षड्यंत्र को विफल कर देता है। इसके उपरान्त अवन्ती दुर्ग में एक राज्य सभा आयोजित की जाती है जिसमें स्कंदगुप्त को शासक घोषित कर दिया जाता है और देवकी माता के परामर्श पर सभी षड्यंत्रकारियों को स्कंदगुप्त क्षमा कर देता है।

किन्तु अभी भी साम्राज्य पर से संकट नहीं टला था और षड्यंत्रकारियों ने हूण आक्रमणकारियों के साथ दुरभिसंधि कर ली एवं गांधार घाटी पर आक्रमण कर दिया। स्कंदगुप्त बन्धुवर्मा और भटार्क की सहायता से आक्रमण का सामना करने का प्रयास करता है। एक ओर जहाँ बंधुवर्मा इस युद्ध में पराजित हो जाते हैं तो दूसरी ओर भटार्क अवसर देखकर पुन: विश्वासघात करता है और कुम्भा के बांध को तोड़ देता है, जिससे सिंधु की बाढ़ में स्कंदगुप्त सैनिकों सहित बह जाता है। ऐसा प्रतीत

अध्याय
9

आषाढ़ का एक दिन

9.1 नाटक की संवेदना एवं उद्देश्य

'आषाढ़ का एक दिन' मोहन राकेश का पहला नाटक है और यह नाटक अपने लेखन के समय से ही हिन्दी समीक्षा के केंद्र में लगातार बना रहा है। इस नाटक में राकेश ने कालिदास तथा अन्य चरित्रों के माध्यम से कुछ ऐसे बिंदुओं को कथ्य बनाया है जिनका सम्बंध आधुनिक युग के सामान्य मनुष्य की मन: स्थिति से है। व्यक्ति की प्रामाणिकता क्या है, यह कैसे और किन स्थितियों में खण्डित होती है, नारी और पुरुष के लिये प्रामाणिकता के क्या अर्थ हैं, और सत्ता और सृजन के जटिल संबंध जैसे मूलभूत प्रश्नों को इस नाटक में बेहद बारीकी के साथ उठाया गया है। अस्तित्ववाद के वैचारिक प्रभाव से युक्त होते हुए भी नाटक सैद्धांतिक ज्ञान के अभाव में पूरी तरह कथ्य को स्पष्ट करने में सफल सिद्ध होता है।

(क) सृजनशीलता और सत्ता का द्वंद्व

इस नाटक में जिस मूल प्रश्न को उठाया गया है वह स्वयं मोहन राकेश के शब्दों में 'सृजनशीलता व सत्ता का द्वंद्व' है। साहित्यिक सृजन आर्थिक रूप से उत्पादक नहीं है, अत: साहित्यकार के सामने दो रास्ते बचते हैं- या तो वह स्वयं उत्पादक कार्य करे और साहित्य की रचना भी करे या ऐसे व्यक्ति की तलाश करे जो उसे रचनाशीलता के लिये आर्थिक आश्रय दे सके। यदि कालिदास को बिना आश्रित हुए लिखना है तो अनिवार्य है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गाएँ चराने का काम करे, पर यह उसे पसंद नहीं है। दूसरा विकल्प राज्याश्रय का है। पसंद तो उसे वह भी नहीं है किंतु 'अभावपूर्ण जीवन की प्रतिक्रिया' में उसे यह विकल्प स्वीकार करना पड़ता है। यहीं से उसका जीवन अप्रामाणिक हो जाता है और प्रामाणिकता-अप्रमाणिकता का द्वंद्व पूरे नाटक में बना रहता है।

कालिदास का केवल पहला चयन ही अप्रामाणिक नहीं है बल्कि उसका दूसरा चयन यानी कश्मीर का राजा बनना भी अप्रामाणिक है। वह कहता है -

> *"तुम्हें बहुत आश्चर्य हुआ था कि मैं कश्मीर का शासन संभालने जा रहा हूँ? ... अभावपूर्ण जीवन की वह एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी। संभवत: उसमें कहीं उन सबसे प्रतिशोध लेने की भावना भी थी जिन्होंने जब-तब मेरी भर्त्सना की थी, मेरा उपहास उड़ाया था।"*

अपनी अंतरात्मा की बजाय बाहरी दबावों से निर्णय लेने से जीवन अप्रामाणिक होता है। त्रासदी यह है कि कालिदास को एक दोहरा जीवन जीना पड़ता है। गाँव में आत्मीयता है पर आजीविका नहीं है। शहर में आजीविका है, आत्मीयता नहीं। आजीविका की खोज में उसे गाँव की आत्मीयता व मल्लिका के प्रेम को छोड़ना पड़ता है, पर ऐसा जीवन संतोषपूर्ण नहीं हो सकता। कालिदास स्वयं कहता है-

> *"मैंने बार-बार अपने को विश्वास दिलाना चाहा कि कमी उस वातावरण में नहीं, मुझमें है। मैं अपने को बदल लूँ तो सुखी हो सकता हूँ। परंतु ऐसा नहीं हुआ। न तो मैं बदल सका, न सुखी हो सका। ..... और एक दिन ..... एक दिन मैंने पाया कि मैं सर्वथा टूट गया हूँ।"*

(ख) प्रामाणिकता की खोज

इस नाटक में प्रत्येक पात्र कहीं न कहीं प्रामाणिकता की खोज में ही बेचैन है। केवल कालिदास ही अप्रामाणिक जीवन जीने को अभिशप्त नहीं है। मल्लिका का जीवन भी कहीं न कहीं अप्राामाणिक ही है। वह आरंभ में ऐसा अहसास दिलाती है कि उसकी प्रामाणिकता खण्डित नहीं हो सकती। उसका कथन है-

अध्याय
10

चिंतामणि

10.1 'कविता क्या है' निबंध की संवेदना

"कविता क्या है" आचार्य शुक्ल का सबसे महत्त्वपूर्ण निबंध है। इस निबंध के माध्यम से शुक्ल जी ने अपनी काव्यशास्त्रीय मान्यताएँ प्रस्तुत की हैं। उनकी कविता संबंधी मान्यताओं के साथ-साथ इस निबंध का स्वरूप भी परिवर्तित होता गया है। 1909 के निबंध और 1939 के निबंध में कई वैचारिक परिवर्तन दिखाई देते हैं। संक्षेप में कहें तो काव्यशास्त्रीय मान्यताओं में रसवाद और लोकमंगलवाद का जो संलयन शुक्ल जी ने किया है, उसी को यह निबंध मूर्त रूप देता है।

शुक्ल जी कहते हैं कि सामान्य व्यक्ति के लिये जीवन का अर्थ है अपने भावों और विचारों को अन्य व्यक्तियों के भावों और विचारों से कहीं मिलाते और कहीं लड़ाते हुए समय व्यतीत करना। इस संपूर्ण स्थिति में वह अपने-आपको एक पृथक् सत्ता के रूप में महसूस करता है और जब तक ऐसी स्थिति रहती है, उसका हृदय बंधा रहता है। मानव की सार्थकता उस अवस्था में है, जहाँ उसका हृदय अपने पार्थक्य को भूलकर संपूर्णता का मात्र एक अंश रह जाता है। यही स्थिति रस-दशा कहलाती है। जिस प्रकार आत्मा की मुक्ति की अवस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार शुक्ल जी की दृष्टि में हृदय की मुक्तावस्था को रसदशा कहा गया है। इस बिन्दु पर आकर शुक्ल जी कविता की व्याख्या करते हुए कहते हैं-

"हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आयी है, उसे कविता कहते हैं।"

इतना ही नहीं, वे आगे बढ़कर कविता को 'भावयोग' की संज्ञा देते हैं और उसे ज्ञानयोग तथा कर्मयोग के समान प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं। स्पष्ट है कि कविता की यह व्याख्या अपनी मूल दृष्टि में रसवादी है तथा इसमें कविता को स्पष्ट शब्दों में साधन माना गया है, साध्य नहीं।

कविता के स्वरूप निर्धारण के बाद आचार्य शुक्ल एक विस्तृत चर्चा इस संबंध में करते हैं कि कविता और जगत में संबंध क्या है? निबंध के तीन खंड - 'सभ्यता के आवरण और कविता', 'कविता और सृष्टि प्रसार' तथा 'मार्मिक तथ्य' मूलत: इसी उद्देश्य से लिखे गए हैं। वे कहते हैं कि सभ्यता की वृद्धि के साथ-साथ मनुष्य के मूल भाव उसके जीवन से कटते गए हैं क्योंकि ऐसे कई बौद्धिक कार्य मनुष्य ने आरंभ किये हैं जो बहुत गहराई में तो आवेगों से जुड़े हुए हैं किन्तु यह गहरा संबंध बाह्य जीवन में दिखाई नहीं देता है। ऐसी स्थिति में कवि के लिये आवश्यक है कि सभ्यता के बढ़ने के साथ-साथ भावों और बाह्य जीवन के बीच की दूरी को उद्घाटित करता जाए। वे स्पष्ट कहते हैं-

"प्रच्छन्नता का उद्घाटन कवि कर्म का एक मुख्य अंग है। ज्यों-ज्यों सभ्यता बढ़ती जाएगी, त्यों-त्यों कवियों के लिये यह काम बढ़ता जाएगा।"

शुक्ल जी स्पष्ट करते हैं कि मूलत: ''संपूर्ण सत्ताएँ एक ही परम सत्ता और संपूर्ण भाव एक ही परम भाव के अंतर्भूत हैं। अत: बुद्धि की क्रिया से हमारा ज्ञान जिस अद्वैत भूमि पर पहुँचता है, उसी भूमि तक हमारा भावात्मक हृदय भी इस सत्व रस के प्रभाव से पहुँचता है।" कविता चूँकि भाव को उसी बिन्दु तक ले जाना चाहती है, इसलिये शुक्ल जी मानते हैं कि अच्छी कविता वह होगी, जो न केवल 'नर क्षेत्र' के भीतर रहे, बल्कि वह 'मनुष्येतर बाह्य सृष्टि' और 'समस्त चराचर जगत' तक विस्तृत हो। वे स्पष्ट करते हैं कि विश्व की अधिकांश कविताएँ नर क्षेत्र के भीतर ही रहती हैं। संस्कृत के प्राचीन प्रबंध काव्यों में बाह्य प्रकृति का आलंबन रूप दिखाई देता है और मेघदूत इस प्रवृत्ति का सर्वोत्कृष्ट काव्य है, लेकिन सच्चा कवि वही है, जो प्रकृति के साधारण-असाधारण सभी रूपों में रमता हो। ऐसे कवियों में वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति जैसे कवि प्रमुख हैं।

कविता और जगत के संबंध की चर्चा का अंतिम बिन्दु शुक्ल जी ने 'मार्मिक तथ्य' के अंतर्गत उठाया है। वे स्पष्ट करते हैं कि रस की उपलब्धि का मूल आधार ज्ञानात्मक तथ्य हैं। ऐसी स्थिति में तथ्यों से बचना न संभव है, न वांछनीय।

अध्याय
11

निबंध-निलय

11.1 बालकृष्ण भट्ट कृत "साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है"

संवेदना पक्ष

बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के प्रतिनिधि निबंधकार हैं जिनके निबंध लेखन में इस युग की सर्वाधिक सृजनात्मक प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। प्रस्तुत निबंध भारतेंदु युग में खड़ी बोली हिन्दी की बाल्यकालीन अवस्था के बावजूद हिन्दी गद्य के सृजनात्मक प्रयोग का प्रारंभिक एवं प्रतिनिधि उदाहरण है। इस निबंध में तत्कालीन हिन्दी गद्य की वैचारिक सशक्तता एवं भाषिक विकास को देखा जा सकता है। इस निबंध में भारतेंदुयुगीन नवजागरण की चेतना सर्वत्र अंतर्व्याप्त है।

इस निबंध के संवेदनात्मक पक्ष को निम्नांकित बिंदुओं में रखा जा सकता है-

- इस निबंध की संवेदना पर भारतेंदुयुगीन नवजागरण की पूरी छाप मौजूद है। इसमें साहित्य को व्यक्ति के संदर्भ में न देखकर जनसमूह के हृदय के विकास के संदर्भ में देखा गया है- *"प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिप्लुत रहती है, वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं। xxx इसलिये साहित्य यदि जन-समूह (Nation) के चित्त का चित्रपट कहा जाए तो संगत है।"*
- भट्ट जी साहित्य को इतिहास से अलग करते हैं। यह विभेदीकरण प्रायः वैसा ही है जैसा प्रेमचंद के यहाँ किया गया है। प्रेमचंद का प्रसिद्ध विचार है कि इतिहास में नाम, तिथियाँ, घटनाएँ सच होती हैं किंतु बाकी सब झूठ जबकि साहित्य में नाम, तिथियाँ, घटनाएँ झूठ होती हैं, बाकी सब सच। भट्ट जी कहते हैं- "किसी देश का इतिहास पढ़ने से केवल बाहरी हाल हम उस देश का जान सकते हैं पर साहित्य के अनुशीलन से कौम के सब समय-समय के आभ्यन्तरिक भाव हमें परिस्फुट हो सकते हैं।"
- बालकृष्ण भट्ट ने साहित्य को जनसमूह के हृदय का विकास मानते हुए वैदिक साहित्य से लेकर भारतेंदुयुगीन गद्य साहित्य तक पर विचार किया है जो इस प्रकार है-
  - (क) भट्टजी ने वैदिक साहित्य के विश्लेषण से बात आरंभ की है। हम जानते हैं कि वैदिक साहित्य में प्राकृतिक शक्तियों को ईश्वर मानकर उनकी प्रार्थना में ऋचाएँ रची गई हैं। भट्टजी लिखते हैं *"प्रातः काल उदयोन्मुख सूर्य की प्रतिभा देख उनके सीधे-सादे चित्त ने बिना कुछ विशेष छानबीन किये इसे अज्ञात और अजेय शक्ति समझ लिया। xxx वायु जब प्रबल वेग से बहने लगी तो उसे भी एक ईश्वरीय शक्ति समझ उसको शांत करने को वायु की स्तुति करने लगे इत्यादि। वे ही सब ऋक् और साम की पावन ऋचाएँ हो गईं।"*
  - (ख) उपनिषद साहित्य को भट्टजी आर्यों के ईश्वर विषयक चिंतन का परिणाम मानते हैं।
  - (ग) स्मृति साहित्य को भट्टजी उस सामाजिक व्यवस्था की उपज मानते हैं जिसमें *'सबों को एकता के सूत्र में बद्ध रखने के लिये और अपने-अपने गुण कर्म से चल-विचल हो सामाजिक नियमों को किसी प्रकार की हानि न पहुँचाए'* जैसी स्थिति की आवश्यकता महसूस की गई। स्पष्टतः यह मौर्योत्तर सामाजिक स्थिति को संकेतित करता है जिसमें मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति लिखी गईं।
  - (घ) इसके बाद भट्टजी रामायण एवं महाभारत जैसे महाकाव्यों की व्याख्या करते हैं। वे उदाहरण देते हैं कि रामायण उस युग की अभिव्यक्ति है जिसमें दो भाई (राम एवं भरत) एक दूसरे के लिये सारा राजपाट न्यौच्छावर करने के लिये व्याकुल दिखते हैं। वहीं, महाभारत में उस समाज की स्थिति अभिव्यक्त हुई है जिसमें दो भाइयों के कुलों का पारिवारिक स्वार्थ इस हद तक हो गया है कि बिना युद्ध के वे सुई के अग्रभाग के बराबर ज़मीन भी नहीं सौंपेंगे।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456